[2022] 16 एस. सी. आर.

कंचन कुमार

बनाम्

बिहार राज्य

(आपराधिक अपील संख्या 1562/2022)

14 सितंबर, 2022

[बी. आर. गवई और पामिदिघंतम श्री नरसिम्हा, न्यायमूर्तिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-धाराएँ 227, 228 - आरोप मुक्त आवेदन - आरोप गठन के लिए प्रथम दृष्ट्या वाले मामले की आवश्यकता - अपीलार्थी के खिलाफ दर्ज एफ. आई. आर.- भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराएँ 13 (1) (डी) और 13 (2) में आरोप लगाया गया है कि उनके पास आय के ज्ञात स्रोत से अधिक संपत्ति है-उनके खिलाफ दायर आरोप पत्र से संकेत मिलता है कि उन्होंने कुल रुपया 3,01,561/- की आय अर्जित की एवं रुपया 5,24,386 जाँच अवधि के दौरान व्यय किया- इस प्रकार रुपया 2,22,825, ज्ञात स्रोत से अधिक अनानुपातिक रूप से संचित किया। आरोप मुक्ति - अपीलकर्ता ने विशेष न्यायाधीश के समक्ष आरोप लगाते हुए आरोप लगाया कि गणना में स्पष्ट त्रुटियां थीं-आवेदन को संक्षेप में खारिज कर दिया गया था-उच्च न्यायालय ने यह देखते हुए पुनरीक्षण आवेदन को खारिज कर दिया कि अपीलकर्ता द्वारा उठाए गए तर्क को उचित सत्यापन जाँच की आवश्यकता है जो कि केवल मुकदमे जाँच के दौरान ही स्वीकार्य हो सकती है-सघन जाँच के प्रांरभ में धारा-227 के आवेदन पर निर्णय हेतु. मामले की व्यापक संभावनाओं और रिकॉर्ड पर सामग्री के कुल प्रभाव पर विचार करना है, जिसमें मामले में दिखाई देने वाली किसी भी कमजोरी की जांच शामिल है। व्यय राशि रु. 5,24,386 जैसा कि आरोप-पत्र में आरोप लगाया गया है, कुछ गलतियों पर आधारित है-कुल खर्च केवल था और न कि जाँच अवधि के दौरान दिखाई गई 2,69,355/- का खर्च 3,01,561 के विपरीत था। जाँच अवधि के दौरान आरोप मुक्ति के लिए एक आवेदन के उचित निर्णय के लिए यह सरल और आवश्यक जांच स्पष्ट रूप से

प्रदर्शित करती है कि मामले में अभियोजन पक्ष द्वारा कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनाया गया था-इसके अलावा, मामले में शामिल देरी को देखते हुए, अभियोजन की निरंतरता भी अन्यायपूर्ण होगी।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया।

1. दं.प्र.सं. की धारा 227 के तहत एक आवेदन पर निर्णय लेने के लिए आवश्यक जांच की अपेक्षा के मद्देनजर मामले की व्यापक संभावनाओं और रिकॉर्ड पर सामग्री के कुल प्रभाव पर विचार करना है, जिसमें मामले में दिखाई देने वाली किसी भी कमजोरी की जांच भी शामिल है।[पैरा 13] [195-बी-सी]

2.1 यह उचित है और वास्तव में आरोप-पत्र में ही बताए गए व्यय के तीन शीर्षों तक जांच को सीमित करने के लिए पर्याप्त है।यह सीमित जांच दं.प्र.सं. की धारा 227 की आवश्यकताओं को भी पूरा करेगी। [पैरा 16.1] [197-डी-ई]

2.2. पहली आपत्ति रुपये की राशि को शामिल करने से संबंधित है। जो चेक अवधि के दौरान अपीलार्थी के बैंक खाते में शेष राशि के रूप में दर्ज किया गया और तदनुसार आरोप पत्र में व्यय के रूप में गिना गया।हालांकि, अपीलार्थी द्वारा दायर बैंक पासबुक, जो जांच अधिकारी और विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के लिए उपलब्ध थी, स्पष्ट रूप से केवल रु.11,998 जाँच अवधि के दौरान शेष राधि के रुप में दर्ज की गई।अभियोजन द्वारा आंकड़ों में अंतर की व्याख्या नहीं की गई थी।तदनुसार, विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) और उच्च न्यायालय अभियोजन पक्ष के साक्ष्य में इतनी सरल और सीधी असंगति का मिलान करने में विफल रहे। [पैरा 16.2] [197-ई-जी]

2.3 दूसरी आपत्ति बी. एस. एफ. सी. से ऋण के पुनर्भुगतान के लिए व्यय के रुप में रुपया 53,467 की राधि को शामिल करने से संबंधित है। हालांकि, ऋण किश्तों के लिए चुकाई गई राशि पहले से ही अपीलार्थी के सकल वेतन से काट ली गई थी, और कटौती का आंकड़ा चेक अवधि के दौरान अपीलार्थी के पास कुल व्यय योग्य आय के रूप में दर्ज किया गया था। इसलिए, ऋण चुकौती को अलग से एक बार फिर व्यय के रूप में नहीं गिना जा सकता है यह एक स्पष्ट गलती है। [पैरा 16.3] [197-एच; 198-ए-बी]

2.4 तीसरी आपत्ति 1974 से 1988 की चेक अवधि के बारह साल बाद 21.02.2000 पर अपीलार्थी के घर में की गई तलाशी के दौरान मिली वस्तुओं के मूल्य के रूप में रुपया 1,58,562 के समावेश से संबंधित है।प्रथम दृष्टया यह संकेत देने के लिए कुछ भी नहीं है कि वर्ष 2000 में तलाशी के दौरान पाई गई ये वस्तुएं जांच अवधि के दौरान प्राप्त की गई थीं।चेक अवधि के दौरान उपार्जित किए गए सामग्रियों को कोई अन्य सामग्री के अभाव में जोड़ना उनके मूल्य को व्यय में शामिल करना अनुमति देने योग्य नहीं है।अपीलार्थी की आपत्ति इस राशि को व्यय की सूची में शामिल करना पूरी तरह से उचित है [पैरा 16.4] [198-बी-डी]

3. व्यय के तीन शीर्षों को जाँच अवधि के दौरान अपीलार्थी के कुल कथित व्यय से बाहर रखा जाना चाहिए। तदनुसार, कुल खर्च केवल रु. 2,69,355, और रुपये 5,24,386 नहीं है, जो कुछ गलतियों पर आधारित है। यह रुपये 2,69,355 का खर्च जिसकी तुलना रुपये 3,01,561 की आय से की जानी चाहिए। ये तथ्य स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि अभियोजन पक्ष द्वारा कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनाया गया है और इसलिए अपीलार्थी आरोपमुक्त होने का हकदार था। [पैरा 17] [1968-ई-एफ]

4. 1974 और 1988 के बीच की अवधि में अपीलार्थी की अनानुपातिक आय से संबंधित आरोप उक्त अवधि समाप्त होने के बारह साल बाद दर्ज की गई एक प्राथमिकी में लगाया गया था।एफ़. आई. आर. दर्ज होने के सात साल बाद आरोप पत्र दायर किया गया। आरोप पत्र दाखिल करने के लगभग एक दशक बाद आरोपमुक्त करने का आवेदन 28.03.2016 पर खारिज कर दिया गया।बर्खास्तगी की पुष्टि उच्च न्यायालय द्वारा सात महीने बाद, यानी 05.10.2016 पर की गई थी। अंत में, और दुर्भाग्यवश, वर्तमान एसएलपी पिछले छह वर्षों से इस न्यायालय के समक्ष लंबित है।इस बीच, अपीलार्थी 2010 में सेवा से सेवानिवृत्त हो गए, लेकिन उनके पास मामला लड़ने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। वे अब 72 वर्ष के हो गए हैं। अवैधता के अलावा अभियोजन को जारी रखना भी अन्यायपूर्ण होगा। [पैरा 19] [198-जी-एच; 199-ए-बी]

भारत संघ बनाम प्रफुल्ल कुमार सामल और एक अन्य (1979) 3 एससीसी 4:[1979] 2 एस. सी. आर. 229; सज्जन कुमार बनाम केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (2010) 9 एस. सी. सी. 368:[2010] 11 एससीआर 669;

दीपकभाई जगदीशचंद्र पटेल बनाम गुजरात राज्य (2019) 16 एससीसी 547:[2019] 6 एससीआर 701-पर निर्भर था।

गुलाम हसन बेग बनाम मोहम्मद मकबूल माग्रे 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 913-संदर्भित।

वाद विधि संदर्भ

[1979] 2 एससीआर 229	पर आधारित	कंडिका 13
[2010] 11 एससीआर 669	पर आधारित	कंडिका 14
[2019] 6 एससीआर 701	पर आधारित	कंडिका 15

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः 2022 की आपराधिक अपील संख्या 1562

2016 का अपराधिक विविध सं. 23031 में पटना उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार के न्यायिक निर्णय और आदेश दिनांक 05.10.2016 से

सुनील कुमार, वरिष्ठ अधिवक्ता, हिमांशु शेखर, पार्थ शेखर, अवनीश सिन्हा, अधिवक्ता। अपीलार्थी के लिए।

अभिनव मुखर्जी, प्रतिवादी के लिए अधिवक्ता। न्यायालय का निर्णय पमिडिगंथम श्री नरसिम्हा न्या. द्वारा दिया गया था।

निर्णय

1. अनुमति दी गई।

2. यह अपील दंड प्रक्रिया संहिता, 1973[1] की धारा 227 के तहत अपीलकर्ता द्वारा दायर आवेदन के ट्रायल[2] 1 और उच्च न्यायालय[3] 2 द्वारा समवर्ती खारिज किए जाने के खिलाफ है।

1 इसके पश्चात् 'दंड प्रक्रिया संहिता' के रूप में निर्दिष्ट किया गया है।

2 विशेष न्यायाधीश (सतर्कता), पटना, दिनांक 28.03.2016 के विशेष मामला संख्या 9/2000 में।

3 पटना में उच्च न्यायालय, दिनांक 05.10.2016 के आपराधिक प्रकीर्ण संख्या 23031/2016 में।

3. इस अपील के दाखिल किए जाने से जुड़े तथ्यःअपीलकर्ता ने 19.07.1974 को सहायक महाप्रबंधक के रूप में बिहार राज्य वित्तीय निगम[4] में योगदान दिया।तेरह साल की अवधि के बाद, 1987 में, अपीलकर्ता के खिलाफ कथित रूप से बिहार में तीन घर और दो भूमि खरीदने के लिए एक शिकायत दर्ज की गई, जो शिकायतकर्ता के अनुसार, अपीलकर्ता की आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक थी। इस शिकायत की जांच की गई और विस्तृत जांच के बाद आरोप झूठे पाए गए।पटना में एक आवासीय घर के अलावा, जिसे अपीलार्थी ने बीएसएफसी से ऋण की मदद से 29.08.1988 को 2,26,500 रुपये में खरीदा था, कोई अन्य संपत्ति अपीलार्थी के स्वामित्व में नहीं पाई जा सकी .हालांकि आरोप में कोई दम नहीं पाए जाने के बावजूद जांच लंबित रखी गई।

4. इस बीच, जीवन आगे बढ़ा और 1996 में, अपीलकर्ता बीएसएफसी में अपना ग्रहणाधिकार रखते हुए प्रतिनियुक्ति पर तेल और प्राकृतिक गैस आयोग[5] में उप महाप्रबंधक के रूप में शामिल हुआ। ओएनजीसी में शामिल होने के 4 वर्ष बाद उसके खिलाफ एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दिनांक 21.02.2000 को भ्रष्टाचार निवारण कानून 1988[6] के अंतर्गत धारा-13 (1) (डी) और 13 (2) के अंतर्गत संस्थित किया गया। उसी आरोप पर कि उसके पास आय के श्रोत से अधिक संपत्ति थी। इन कथि संपत्तियों को कथित तौर पर अधिग्रहण के दौरान अर्पित किया गया था और परिणामस्वरुप जाँच की अवधि में प्राथमिकी पर उनके वी.एफ.एस.सी में शामिल होने की तिथि से विचार किया गया अर्थात्बीएसएफसी में शामिल होने की तारीख से, अर्थात् 19.07.1974 से उनके द्वारा खरीदे गए आवासीय घर के पंजीकरण की तारीख तक, अर्थात 29.08.1988 तक। अपीलकर्ता ने 18.04.2002 को पटना के पुलिस महानिदेशक (सतर्कता) को एक पत्र लिखा, जिसमें शिकायत की गई कि एफआईआर में गणना में उसकी आय को कम आंका गया और उसकी संपत्ति को अधिक आंका गया, इस प्रकार उसके खर्च के एक झूठे और बढ़े हुए खाते को दर्शाया गया।

5. आखिरकार 11.09.2007 को एक आरोप पत्र दायर किया गया, यानी, प्रथम इत्तिल रिपोर्ट के दर्ज होने के लगभग सात साल बाद, और वास्तव में, इस आरोप पर शिकायत के बीस साल बाद अधिकारियों द्वारा गलत पाया गया। चाहे जो भी हो, अपीलार्थी के खिलाफ

4 इसमें इसके बाद 'बीएसएफसी' के रूप में संदर्भित किया गया है।

5 यहां इसके बाद ओएनजीसी के रूप में संदर्भित किया गया है।

6 इसमें इसके पश्चात् 'पीसी अधिनियम' के रूप में निर्दिष्ट किया गया है।

दायर आरोप पत्र में संकेत दिया गया कि उसने जाँच अवधि के दौरान 3,01,561 रुपये की कुल आय अर्जित की और 5,24,386 रुपये का खर्च किया.इस बात को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी के खिलाफ 2,22,825 रुपये एकत्र करने का आरोप था, जो उसकी आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक था। आरोप पत्र में दो अवयव में उनकी आय के दो घटकों को दर्शाया गया है, जो आय के साधन हैं(i) 1,13,081 रुपये की बचत (उनके वेतन का 1/3 वां हिस्सा) और (ii) 1,88,480 रुपये के बीएसएफसी से आवास और कार ऋण।दूसरी ओर, आरोप पत्र में उनके व्यय के छह घटक शामिल थे, जो इस प्रकार हैंः (i) अपने घर के निर्माण के लिए 2,26,500 रुपये का भुगतान, ii) जांच अवधि के दौरान 24,800 रुपये का सामान्य व्यय, iii) बैंक जमा में 55,000 रुपये की राशि, iv) 53, 467 करोड़ रुपये के ऋण का पुनर्भुगतान, v) भारतीय जीवन बीमा निगम की 6057 रुपये की जमा राशि और 21.02.2000 को की गई तलाशी के दौरान बरामद वस्तुओं का अनुमानित मूल्य 1,58,562 रुपये है।

6. प्रासंगिक स्तर पर, अपीलार्थी ने विशेष न्यायाधीश (सतर्कता), पटना के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 (जो धारा 227[7] के तहत होनी चाहिए थी) के तहत आरोप मुक्त करने के लिए आवेदन किया, यह आरोप लगाते हुए कि गणना में स्पष्ट त्रुटियां थीं। तथापि, न्यायालय ने प्रस्तुत दस्तावेजों और प्रस्तुत की गई दलीलों का विश्लेषण या परीक्षण किए बिना 28.03.2016 के अपने आदेश द्वारा आवेदन को संक्षिप्त रूप से खारिज कर दिया।न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित कियाः

> "रिकॉर्ड का अवलोकन किया और मुझे पता चला कि इस मामले में आरोपी के खिलाफ कम से कम इस स्तर पर प्रथम दृष्टया पर्याप्त सामग्री है, ताकि उस आरोपी के खिलाफ आरोप तय किया जा सके, जिसके खिलाफ यह आरोप है कि उसने जांच अवधि के दौरान धन इकट्ठा किया।हालांकि याचिकाकर्ता के विद्वत वकील द्वारा कुछ स्पष्टीकरण दिए गए हैं, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि विचारण के दौरान जब अभियुक्त याचिकाकर्ता की पत्नी को अपने मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य पेश करने में निर्दोषिता को रोकने का

7हालांकि अपीलकर्ता ने कहा कि आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के तहत है, क्योंकि पीसी अधिनियम के तहत नियुक्त विशेष न्यायाधीशों को सत्र न्यायालय माना जाता है, डिस्चार्ज आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के तहत दायर किया जाना चाहिए था, न कि धारा 239 के तहत। अपीलार्थी के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सुनिल कुमार ने अपनी निवेदन के दौरान कानून की इस स्थिति को स्पष्ट किया।अपीलार्थी के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सुनील कुमार ने अपनी प्रस्तुतियों के दौरान कानून की इस स्थिति को स्पष्ट किया।

मौका मिलता है तो उस पर गौर किया जाता है और उसकी सराहना की जाती है.वर्तमान में, मैं अभियुक्त द्वारा उसके उन्मोचन आवेदन के समर्थन में उसके पक्ष में प्रस्तुत स्पष्टीकरण से संतुष्ट नहीं हूं।

पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, अभियुक्त याचिकाकर्ता कंचन कुमार की आरोप याचिका इसके द्वारा खारिज की जाती है। आरोप तय करने के लिए 22.04.2016 को प्रस्तुत किया गया। आरोपी को आरोप तय करने के लिए इस अदालत द्वारा तय की गई तारीख को शारीरिक रूप से उपस्थित रहने का निर्देश दिया जाता है।"

7. उन्मोचन के लिए अपने आवेदन के खारिज होने से व्यथित अपीलकर्ता ने उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया।घटनाओं के क्रम का वर्णन करने के बाद, उच्च न्यायालय ने निर्णय के बाद निर्णय उद्धृत किया और अंत में केवल यह अभिनिर्धारित करते हुए पुनरीक्षण आवेदन को खारिज कर दियाः

"15. उपर्युक्त परिस्थितियों में, भले ही याचिकाकर्ता की ओर से किए गए निवेदनों पर विचार किया जाए, तर्क के लिए उचित सत्यापन की आवश्यकता है जिससे जांच को आकर्षित किया जा सके जो केवल मुकदमे के दौरान ही अनुज्ञेय हो सकता है।

16. मूल्यांकन से संबंधित याचिकाकर्ता की ओर से बहुत जोर दिया गया है.दुहराते हुए, याचिकाकर्ता का तर्क है कि जैसा कि छापा 21.02.2000 को चलाया गया था, उसके कारण, निगरानी के द्वारा इस प्रकार जब्त की गई वस्तु के खिलाफ मूल्यांकन को वसूली की तारीख के अनुरूप माना जाना चाहिए। यह तर्क इस तथ्य की पृष्ठभूमि में भ्रामक है कि केस डायरी से, यह स्पष्ट है कि मूल्यांकन का केवल अनुमान लगाया गया है. प्रथमदृष्टया सामग्री का पूर्ण अभाव होता है जिससे कोई यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि उसी क्षण इस प्रकार लगाया गया मूल्य अभिग्रहण की अभिकथित तारीख को अभिभावी दर पर था।इसके अलावा, इस आधार पर

वास्तविकता का पता लगाने के लिए फिर से जांच को आकर्षित किया जाएगा जो वर्तमान चरण के लिए निषिद्ध पाया गया है।

17. इसके परिणामस्वरूप, तत्काल याचिका में कोई दम नहीं पाया गया और तदनुसार इसे खारिज कर दिया गया।"

8. यह पूर्वोक्त आदेश के खिलाफ है कि अपीलार्थी ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

9. पक्षकारों का निवेदनः- वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सुनील कुमार ने निवेदन किया है कि कुछ मदों की गणना और गलत तरीके से शामिल करने से संबंधित बुनियादी आपत्ति अपीलार्थी को बरी करने के लिए निचली अदालत के लिए पर्याप्त थी। एक सरल और सीधी निवेदन में उन्होंने हमें कुछ स्पष्ट त्रुटियों के बारे में बताया जो अदालत के स्पष्ट थीं। विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के समक्ष मामले के रिकॉर्ड से स्पष्ट थी। अपने निवेदन के समर्थन में, उन्होंने भारत संघ बनाम प्रफुल्ल कुमार समल और अन्य[8] और गुलाम हसन बेग, बनाम् मकबूल मार्गरे[9] में इस न्यायालय के निर्णयों का भी उल्लेख किया।

10. प्रत्यर्थी श्री अभिनव मुखर्जी एओआर ने तर्क दिया है कि निचली अदालत द्वारा उन्मोचन आवेदन को खारिज करना सही था।उन्होंने निवेदन किया कि न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के तहत एक आवेदन पर निर्णय देते समय एक घुमावदार जांच नहीं कर सकते थे।

11. वाद विषयः विचार के लिए उत्पन्न होने वाला छोटा सवाल यह है कि क्या अपीलकर्ता पीसी अधिनियम के तहत उसके खिलाफ शुरू की गई कार्यवाही से मुक्त होने का हकदार है।

12. कानूनी प्रावधान और पूर्ववर्तीःदंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 में उन्मुक्ति (दोषमुक्ति) से संबंधित मामला इस प्रकार हैः

"227. उन्मोचन-यदि मामले के रिकॉर्ड और उसके साथ प्रस्तुत दस्तावेजों पर विचार करने के बाद और इस संबंध में अभियुक्त और अभियोजन पक्ष

8 (1979) 3 एस सी सी 4.

9 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 913.

की प्रस्तुतियों को सुनने के बाद न्यायाधीश यह समझता है कि अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, तो वह अभियुक्त को उन्मोचित करेगा और ऐसा करने के लिए अपने कारणों को अभिलिखित करेगा।"

13. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन किसी आवेदन के न्यायनिर्णयन के लिए अपेक्षित संवीक्षा की दहलीज मामले की व्यापक संभाव्यताओं और मामले में उपस्थित किसी भी दुर्बलता की जांच सहित अभिलेख पर सामग्री के कुल प्रभाव पर विचार करना है। प्रफुल्ल कुमार सामल (उपर्युक्त) में यह उल्लेख किया गया थाः

"10. इस प्रकार, उपर्युक्त प्राधिकरणों पर विचार करने पर निम्नलिखित सिद्धांत सामने आते हैंः

(1) संहिता की धारा 227 के अधीन आरोप विरचित करने के प्रश्न पर विचार करते समय न्यायाधीश को यह पता लगाने के सीमित प्रयोजन के लिए कि अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्टया मामला बनता है या नहीं, साक्ष्य को छांटने और तौलने की निस्संदेह शक्ति है।

(2) जहां न्यायालय के समक्ष रखी गई सामग्री अभियुक्त के विरुद्ध गंभीर संदेह प्रकट करती है जिसे उचित रूप से स्पष्ट नहीं किया गया है वहां न्यायालय आरोप विरचित करने और विचारण के साथ कार्यवाही करने में पूरी तरह से न्यायोचित होगा।

(3) प्रथमदृष्टया मामला अवधारित करने की कसौटी स्वाभाविक रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगी और सार्वभौमिक अनुप्रयोग का नियम अधिकथित करना कठिन है।तथापि, कुल मिलाकर यदि दो मत समान रूप से संभव हैं और न्यायाधीश का यह समाधान हो जाता है कि उसके समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य से अभियुक्त के विरुद्ध कुछ संदेह तो पैदा होता है किंतु गंभीर संदेह नहीं होता है तो वह अभियुक्त को उन्मोचित करने के अपने अधिकार के भीतर होगा।

> (4) संहिता की धारा 227 के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए न्यायाधीश, जो वर्तमान संहिता के अधीन एक वरिष्ठ और अनुभवी न्यायालय है, केवल डाकघर या अभियोजन के मुखपत्र के रूप में कार्य नहीं कर सकता है, बल्कि मामले की व्यापक संभाव्यताओं, न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य और दस्तावेजों के कुल प्रभाव, मामले में उपस्थित होने वाली किसी भी बुनियादी दुर्बलता आदि पर विचार करना होगा।तथापि, इसका यह अर्थ नहीं है कि न्यायाधीश को मामले के पक्ष और विपक्ष की जांच करनी चाहिए और साक्ष्य को इस प्रकार तौलना चाहिए मानो वह विचारण कर रहा हो।"
>
> (जोर दिया गया)

14. सज्जन कुमार बनाम केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो[10] वाले मामले में, अदालत ने अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए हर दस्तावेज को स्वीकार करने के खिलाफ आगाह किया और कहा कि अदालत के समक्ष पेश किए गए सबूतों को परखना महत्वपूर्ण है। यह पाया गया किः

> "21. संहिता की धारा 227 और 228 की व्याप्ति के बारे में प्राधिकारियों के विचार पर निम्नलिखित सिद्धांत सामने आते हैंः
>
> (v) आरोपों की विरचना के समय अभिलेख पर रखी गई सामग्री का प्रमाणिक मूल्य नहीं देखा जा सकता किंतु आरोप की विरचना से पूर्व न्यायालय को अभिलेख पर रखी गई सामग्री पर अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करना चाहिए और इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि अभियुक्त द्वारा अपराध किया जाना संभव था।
>
> (vi) धारा 227 और 228 के प्रक्रम पर न्यायालय से उपलब्ध अभिलेखों एवं दस्तावेजों का मूल्यांकन करने की अपेक्षा की जाती है और दस्तावेजों पर अभिलेख यह पता लगाने की दृष्टि से कि क्या उनके अंकित मूल्य पर

10 (2010) 9 एससीसी 368

लिए गए तथ्य कथित अपराध को गठित करने वाले सभी अवयवों के अस्तित्व को प्रकट करते हैं। इस सीमित प्रयोजन के लिए, साक्ष्य को छांटना, क्योंकि उस प्रारंभिक चरण में भी यह उम्मीद नहीं की जा सकती है कि अभियोजन पक्ष उन सभी बातों को स्वीकार करेगा, जो सामान्य ज्ञान या मामले की व्यापक संभाव्यताओं के विपरीत हैं।"

15. धारा 227 के अधीन उन्मोचन पर सिद्धांतों का सारांश दीपकभाई जगदीशचंद्र पटेल बनाम गुजरात राज्य[11] में इस न्यायालय ने पुनः उद्धृत किया:

"23. इस न्यायालय द्वारा अधिकथित सिद्धांतों के अनुसार आरोप की विरचना के प्रक्रम पर, न्यायालय से यह अपेक्षा की जाती है कि वह केवल डाकघर के रूप में कार्य न करे। न्यायालय को वास्तव में अपने समक्ष सामग्री को परखना चाहिए। छांटने वाली सामग्री वह सामग्री होगी जो अभियोजन पक्ष द्वारा उत्पादित और निर्भर की जाती है। छंटाई इस अर्थ में सावधानीपूर्वक नहीं की जानी चाहिए कि अदालत को पूर्ण सुनवाई के बाद पूरे सबूत पेश करने के बाद बहस की सुनवाई करने वाले निचली अदालत के न्यायाधीश की भूमिका निभानी चाहिए और सवाल यह नहीं है कि क्या अभियोजन पक्ष ने आरोपी को दोषी ठहराने का मामला तैयार किया है। केवल इतना ही अपेक्षित है कि न्यायालय को इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि उपलब्ध सामग्री के साथ, अभियुक्त के लिए मुकदमा चलाने के लिए एक मामला बनाया गया है। एक मजबूत संदेह पर्याप्त है। हालांकि, कुछ सामग्री पर एक मजबूत संदेह स्थापित किया जाना चाहिए। सामग्री ऐसी होनी चाहिए जो साक्ष्य में परिवर्तित की जा सके। मजबूत संदेह न्यायाधीश की नैतिक धारणाओं पर आधारित शुद्ध व्यक्तिपरक संतुष्टि नहीं हो सकती कि यह एक ऐसा मामला है जहां यह संभव है कि अभियुक्त ने अपराध किया है।मजबूत संदेह वह संदेह होना चाहिए जो किसी ऐसी सामग्री पर आधारित है जो अदालत के समक्ष खुद को इस प्रथम दृष्टया विचार करने के लिए पर्याप्त बताती है कि आरोपी ने अपराध किया है।"

---

11 (2019) 16 एससीसी 547

(जोर दिया गया)

16.1 विश्लेषणः बहुत अधिक ब्यौरे में जाने के बिना, हम अपनी जांच को आरोप पत्र में ही इंगित व्यय के तीन शीर्षों तक सीमित रखना उचित और वास्तव में पर्याप्त मानते हैं।यह सीमित जांच दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 की आवश्यकताओं को भी पूरा करेगी।

16.2 पहली आपत्ति 55, 000 रुपये की राशि को जाँच अवधि के दौरान अपीलकर्ता के बैंक खाते में शेष राशि के रूप में दर्ज किया गया और तदनुसार आरोपपत्र में एक व्यय के रूप में गिना गया।हालांकि, अपीलकर्ता द्वारा दायर बैंक पासबुक, जो जांच अधिकारी और विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) को उपलब्ध थी, स्पष्ट रूप से जांच की अवधि के दौरान केवल 11,998 रुपये की शेष राशि दर्ज करती है.आंकड़ों में अंतर को अभियोजन द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया था। तदनुसार, विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) और उच्च न्यायालय का अभियोजन के साक्ष्य में इतनी सरल और सीधी असंगतता का समाधान करने में विफल रहा।हमारी राय है कि केवल 11,998 रुपये की राशि, जो चेक अवधि के दौरान अपीलकर्ता के बैंक पासबुक में शेष राशि के रूप में दर्ज है, इस शीर्ष के तहत व्यय के रूप में वैध रूप से स्वीकार्य है.

16.3 दूसरी आपत्ति निम्नलिखित को शामिल करने से संबंधित है - तथापि, ऋण किस्तों के रूप में चुकाई गई राशि को अपीलार्थी के सकल वेतन से पहले ही काट लिया गया था और कटौती की गई राशि को चेक अवधि के दौरान अपीलार्थी के पास कुल निपटान योग्य आय के रूप में दर्ज किया गया था।इसलिए, ऋण के पुनर्भुगतान को अलग से एक बार फिर से व्यय के रूप में नहीं गिना जा सकता है।यह एक स्पष्ट गलती है।विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के साथ-साथ उच्च न्यायालय ने इस आपत्ति पर इस आधार पर विचार नहीं किया कि आरोप मुक्त करने के चरण की जांच की अनुमति नहीं है।

17. इसमें ऊपर चर्चा किए गए व्यय के तीन शीर्षों को जांच अवधि के दौरान अपीलार्थी के कुल कथित व्यय से बाहर रखा जाना चाहिए।सबसे पहले, बैंक पासबुक में दर्शाई गई अपीलकर्ता की वास्तविक शेष राशि, अर्थात्, 11,998 रुपये, जबकि कथित खाते में 55,000 रुपये की शेष राशि है, को ध्यान में रखा जाना चाहिए।इसके अलावा, दूसरी और तीसरी राशि, जैसा कि ऊपर इंगित किया गया है, को आरोप पत्र में उल्लिखित अपीलार्थी के कुल व्यय से बाहर रखा जाना चाहिए।तदनुसार, कुल व्यय केवल 2,69,355 रुपये आता है,

न कि 5,24,386 रुपये, जो कुछ गलतियों पर आधारित है जो हमने इसमें ऊपर इंगित की हैं। यह मामला 2, 69, 355 रुपये का है, जिसकी तुलना जांच अवधि के दौरान 3,01,561 रुपये की आय से की जानी है। ये तथ्य स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करते हैं कि अभियोजन पक्ष द्वारा कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनाया गया है और इसलिए अपीलार्थी उन्मोचन का हकदार था।

18. हमने जो निष्कर्ष निकाले हैं वे हमारे सामने रखी गई सामग्रियों पर आधारित हैं, जो मामले के रिकॉर्ड का हिस्सा हैं।यह वही रिकॉर्ड है जो विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के पास उपलब्ध था जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के तहत आवेदन पर विचार किया गया था। इसके बावजूद विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) ने इस साधारण आधार पर आरोप मुक्त करने के आवेदन को खारिज कर दिया कि आरोप मुक्त करने के चरण में जांच की अनुमति नहीं है। हमने जो किया है वह कोई घूमती-फिरती जांच नहीं है, बल्कि निर्मुक्ति के लिए एक आवेदन के उचित अधिनिर्णय के लिए एक सरल और आवश्यक जांच है। विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए इसी तरह की जांच करने के लिए बाध्य थे कि अपीलकर्ता के लिए मुकदमा चलाने के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनता है। दुर्भाग्य से उच्च न्यायालय ने भी वही गलती की जो विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) ने की थी।

19. उपरोक्त विश्लेषण के अलावा, हम बड़ी व्यथा के साथ नोट करेंगे कि 1974 और 1988 के बीच की अवधि में अपीलार्थी की आय से संबंधित आरोप कथित अवधि समाप्त होने के बारह साल बाद दायर एक प्राथमिकी में लगाया गया था। प्राथमिकी दर्ज होने के सात साल बाद आरोप पत्र दाखिल किया गया। आरोपपत्र दाखिल होने के लगभग एक दशक बाद 28.03.2016 को आरोप मुक्त करने का आवेदन खारिज कर दिया गया। इसके सात महीने बाद यानी 05.10.2016 को उच्च न्यायालय ने इस बर्खास्तगी की पुष्टि की।अंत में, और सबसे दुर्भाग्य से, वर्तमान एसएलपी पिछले छह वर्षों से इस न्यायालय के समक्ष लंबित है।इस बीच, अपीलकर्ता 2010 में सेवा से सेवानिवृत्त हो गया, लेकिन उसके पास मामले को लड़ने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। अब वह 72 वर्ष के हो गए हैं। इसमें ऊपर इंगित अवैधता के अलावा अभियोजन को जारी रखना भी अन्यायपूर्ण होगा।

20. उपरोक्त कारणों से, हम 2016 की एसएलपी (सीआरएल) संख्या 9601 से उत्पन्न आपराधिक अपील की अनुमति देते हैं और 05.10.2016 को आपराधिक अपील (विविध) वाद संख्या 23031 और 2000 के विशेष मामले संख्या 09, दिनांक

28.03.2016 में न्यायाधीश (सतर्कता), के फैसला और आदेश को रद्द करते हैं और अपीलकर्ता को उन्मुक्त करते हैं।

21. खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं।

[बीआर गवई, न्यायमूर्ति]

[पामीदिघंटम श्री नरसिम्हा, न्यायमूर्ति]

नई दिल्ली

14 सितंबर, 2022

खण्डन (डिस्क्लेमर) :– स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।